P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 **SHRINKHALA :** VOL-II * ISSUE-V*January-2015
E: ISSN NO.: 2349-980X

पं0 भवानी प्रसाद मिश्र के काव्य में आधुनिक संवेदना तथा समसामयिक युग बोध

सारांश

आधुनिक हिन्दी साहित्येतिहास में निराला व दिनकर के अन्तर पं0 भवानी प्रसाद मिश्र पौरूष के अकेले कवि हैं। भारतीय जन–मानस में नव चेतना का संचार करने वाले, एक ही साथ सुकुमार एवं पुरूष भावों के उद्गाता, विश्व–वादी एवं राष्ट्रीयता के पुजारी तथा युवा चेतना में कसमसाती क्रांति को तीव्र प्रभंजनी स्वर देनेवाले पं0 भवानी प्रसाद मिश्र हिन्दी कविता के गर्व और गौरव हैं अतीत की चिंगारियों को वर्तमान में सुलगाकर ज्योति जगानेवाले, विषमताओ, सामाजिक विकृतियों पर व्यंग्य और विद्रोह की उपलवृष्टि करने वाले, हिन्दी कविता के छायावाद की कुहेलिका से बाहर निकालकर उसे प्रच्छन्न आलोक के देश में पहुंचाने वाले पं0 भवानी प्रसाद मिश्र पहले कवि हैं।

मुख्य शब्द : छायावादी काव्य,

मंजुला श्रीवास्तव
व्याख्याता,
हिन्दी विभाग,
दयानन्द गर्ल्स पी.जी. कॉलेज,
कानपुर।

परिचय

पं0 भवानी प्रसाद मिश्र का आविर्भाव उस समय हुआ था, जब हिन्दी में छायावादी काव्य अपने उफान पर था। वे छायावद से प्रभावित नहीं हुए। उन्होंने एक नया रास्ता अपनाया, जो हर दृष्टि से विद्रोहपरक था। उन्होंने लिखा है कि, ''मैंने जब लिखना शुरू किया, तब छायावादी कवियों की धूम थी। निराला, प्रसाद और पंत फैशन में थे। ये तीनों ही बड़े कवि मुझे लकीरों में अच्छे लगते थे किसी की भी पूरी कविता बहुत नहीं भा गयी।[1] मिश्र जी का द्विवेदी स्वभाव सामाजिक, राष्ट्रीय, भाषिक और सांस्कृतिक सभी स्तरों पर देखने को मिलता है। उनके गीतों को देखने के बाद बाद उन्हें एक तेजोदीप्त लहर मान लेने में कोई कठिनाई नहीं होती क्योंकि विद्रोह भावना और स्वदेश–प्रम के कवि होने के नाते इनकी कवितायें समय–समय पर राष्ट्रीय आंदोलन की तीखी धारा बनकर उपस्थित हुयी है। अन्याय के विरोध में, विदेशी या स्वदेशी शासन के विरोध में सदैव वे अपनी आवाज बुलंद करते रहे। एक सजग कार्यकर्ता एवं कट्टर देशभक्त के रूप में इन्होंने अपने विद्राही विचारों से सदा शक्ति दी है। इस क्रम में कवि को कई बार जेल की कठिन यात्रा भुगतनी पड़ी है और कई रचनायें जेल के भीतर ही लिखी है तथा कवि को 'त्रिकाल संध्या' तक करनी पड़ी है। त्रिकाल संध्या में जीवन और विद्रोह की उष्मा है, दाहक आग उगलती हुयी ज्वालामुखी को प्रचंड ताप है और मन को मरोड़ देने वाली वेदना के दुष्कर संधात। कवि की वेदना की कसमसाहट और दुष्कर वेदना के संघात उनकी निम्न पक्तियों में आसानी से देखे जा सकते हैं, जहां कवि अपनी स्वतंत्रता की अवश देख विवश होकर कह उठता है :–

मेरा कुछ ठीक नहीं है
जैसे कब कहां रहूंगा मैं
खुद नहीं कह सकता
क्यों जहां चाहता हूँ जब
खुद वहां रह नहीं सकता।

जब सूरज डूबता है
तब मैं चाहता हूँ अपने को
किसी पहाड़ी के पास
मगर बैठा रह जाता हूँ
अपने कमरे में ही
अनायास और स्तब्ध
और खोया हुआ।

भवानी प्रसाद मिश्र अपनी रचनाओं में आधुनिक बोध, आधुनिक संवेदना और नव्य चेतना को लेकर चले हैं। अतः समसामयिकता से गहरा लगाव उनकी रचनाओं में मिलता है। यदि सच कहा जाये तो ''भवानी प्रसाद मिश्र सामान्य

जन की आशा, प्रत्याशा और वेदना के कवि है। सहज और 'सादा अपनापन ही उनके व्यक्तित्व और उनकी कविता की विशेषता है।[2] आधुनिक संवेदना उनके काव्य का मूल स्रोत है। जहां अन्य छायावादोत्तर कवि निर्वैयाक्तिक काव्य–सृजन से संलग्न रहे, वहां वे जीवन की अथाह गहराई लेकर सामाजिक दायित्वों का निर्वाह करते चले हैं। इस सम्बन्ध में ''कविता के नये प्रतिमान'' में डॉ0 नामवर सिंह ने लिखा है कि ''निःसंदेह किसी कविता का सिरजा हुआ संसार ही उनका मूल्य है, किंतु इस मूल्य की प्रासंगिकता इस बात पर निर्भर है कि वह सिरजा हुआ संसार कितना वास्तविक है अथवा वास्तविकता के बारे में हमारी समझ को कितना गहरा और कितना समृद्ध करता है। हमारे आस–पास के संसार को अर्थ प्रदान करने में किसी कविता के अपने संसार की सार्थकता है।[3] मिश्रजी का काव्य–संसार यथार्थ की खुरदुरी और ऊबड–खाबड़ भूमि पर गहरी सहानुभूति और संवेदना का ठोस प्रमाण प्रस्तुत करता है। इस संदर्भ में कवि ने व्यंग्यपरक शैली अपनाई है। जहां मिश्र जी का व्यंग्य चरमोत्कर्ष पर हे, वहां वे साफ चोट करते हैं, झकझोरते हैं। उनकी गीतिफरोश जैसी रचना इसमें काफी सफल की जा सकती है। निराला की 'वनबेला' और 'कुकुरमुत्ता' के अनन्तर इसे इस परंपरा की सशक्त कड़ी के रूप में माना जा सकता है। सूक्ष्म और सशक्त व्यंग्य ही इसकी विशिष्टता है। कवि विवश होकर अपनी कलम बेचता है। पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में जो बाजार की मांग होती है, उसी के अनुकूल गीत लिखे जाते हैं। कवि ग्राहक की मर्जी के अनुरूप भांति–भांति के गीत बेचता है, मानों वह गली–गली फेरी लगा रहा हो। यथा–

जी हां हुजूर, मैं गीत बेचता हूँ
मैं तरह–तरह के गीत बेचता हूँ
मैं किसिम–किसिम के गीत बेचता हूँ
जी माल देखिये, दाम बताऊँगा,
बेकाम नहीं है, काम बताऊँगा,
कुछ गीत लिखे हैं मस्ती में मैंने
कुछ गीत लिखे हैं पस्ती में मैंने
यह गीत सख्त सर दर्द भगायेगा
यह गीत पिया को पास बुलायेगा।[4]

इन पंक्तियों में कवि जीवन की विडम्बना का करूण आक्रोश गहरे स्तर पर रूपायित हुआ है। स्वच्छद कवि की सशक्त वाणी कुछ रोकड़ों में बिक जाती है और इस तरह कवि की स्वतंत्र चेतना स्वमेव नीलाम हो जाती है। जहां, ईमान, धर्म खुलेआम सरे बाजार में बिकता है, वहां कवि कविता क्यों न बेचे? समाजकी पूंजीवादी अर्थव्यवस्था पर करारी पर, सीधा चोट है। यहां रेशमी गीत, खादी गीत, फिल्मी गीत सबके सब सांकेतिक है। व्यंग्य के साथ सहज करूणा ''गीतफरोश'' की सबसे बड़ी विशिष्टता है। कवि जानता है और मानता है कि गीत बेचना पाप है, किन्तु पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में कलम स्वच्छंद कहां? तभी तो वे कहते हैं–

है गीत बेचना वैसे बिल्कुल पाप
क्या करूं मगर लाचार
हार कर गीत बेचता हूं
जी हां हुजूर, मैं गीत बेचता हूं
मैं किसिम–किसिम के गीत बेचता हूं।[5]

यह ध्यातव्य है कि मिश्र जी की अन्यान्य कृतियों में दलितों और शोषितों के प्रति अंतस–संवेदना है। विषमताओं तथा सामाजिक दुर्भावनाओं के विरूद्ध आत्म–संघर्ष है। नव निर्माण की ललक है। यह ललक उन्हें आस–पास के झुग्गी–झोपडियों से मिली है। कवि समाज के जन–जीवन से जुड़ा है। राजनीति के थोथे दलीलों और अपीलों पर कवि को आस्था नहीं क्योंकि उसकी यह अवधारणा है कि राजनीति के थोथे नारों में गहराई नहीं होती। 'दरिंदा' शीर्षक कविता में उन्होंने आज की अमानवीय, असंतुलित और अमर्यादित जीवन पर तीखा व्यंग्य किया हैं कवि प्रतिदिन कहीं न कहीं नर–मेघ की दुर्दांत लीला अपनी नंगी व खुली आंखों से देखता है। कवि को ऐसा लगता है गोया, आदमी की आवाज में 'दरिंदा' बोलता है। यहां तीखा पर स्पष्ट व्यंग्य सहज ही दृष्टव्य है –

दरिदा
आदमो की आवाज में
बोला
मानवता थोड़ी–बहुत जितनी भी थी,
ढेर हो गई।[6]

कवि मिश्र जी जन मानस के वैतालिक हैं, लोक चेतना के गायक हैं। ''नई कविता को लोक–संवेदना से जोड़कर उन्होंने उसके गतिशील एवं विकासशील रूप को निखारने का भरपूर प्रयास किया है।[7] उनकी मान्यता है कि व्यक्ति हर दिन टूटता है, बिखरता है, कभी शरीर से, कभी मन से लेकिन, इस टूटने–बिखरने से क्या होता है, जीने की लालसा व्यक्ति में प्रबल है। फलतः उसकी संघर्ष शक्ति में वृद्धि होती है। इसीलिए वे बार–बार इस बात की घोषणा करते हैं कि जीवन संघष है लड़ो। उनका काव्य संसार शक्ति और साहस का प्रतीक है। उनमें गतिशील जीवन के अनुरूप जागरण का संदेश है। जीवन की भाग–दौड़ में व्यक्ति औपचारिकताओं, शिष्टाचारों और चाटुकारी प्रवृत्तियों में उलझा हुआ है। न तो वह नीले वितान के सौंदर्य को देख पाता है, न बादलों को, न तो कलरव करती चहचहाती शाम को और नही गहरे–पीले चांद को। प्रकृति की बहुमूल्य थाती के आनंद से वह वंचित है। युगीन दबावों, तनावों कुंठाग्रस्त और खुशामदी जिदंगी की विवशता पर कवि की मर्मभेदी दृष्टि प्रस्तुत पंक्तियों में दिखाई देती है :–

आंखे उठाओ
देखो आकाश नीला है,
हलके लाल बादल हैं
चांद गहरा पीला है
मुझे चेटियार साहब बुला रहे हैं।[8]

वे धूल और मिट्टी, आशा और प्रत्याशा, दुख और दर्द के कवि हैं। उनकी दृष्टि में बनावटी जीवन एक धोखा है। सादा जीवन प्राकृतिक और गतिशील है। संकल्प और कर्म में अजेय शक्ति है। अकर्मण्यता से जीवन नष्ट हो जाता है। इस भौतिक जगत में चतुर्दिक मैं–मैं और तू–तू का भाषण द्वन्द्व हैं कारण, यहां हर व्यक्ति अपने को सही

मानता है और दूसरे को मिथ्या। यह दृढ़वादिता और अहं का उन्मेष ही समस्त झगड़े का उत्स है। कवि इन सब बातों से पूर्ण परिचित है। परिणामतः वह वर्तमान त्रासदी के चित्रों को अपना आधार–फलक बनाता है। यही कारण है कि वर्तमान त्रासदी के चित्र उनकी कविताओं से भरे पड़े हैं। उदाहरणार्थ, उनकी 'सारा शहर' शीर्षक कविता देखी जा सकती है। यहां कवि को लगता है जैसे सारा शहर अपनी ही मौत का सपना देख रहा है। चतुर्दिक चितायें जल रही हैं और बच्चे अपनी कब्रें स्वयं खोद रहे हैं। समस्त विस्फोटक स्थितियां कवि की दृष्टि से ओझल नहीं हैं। ऐसा लगता है मानों कवि वर्तमान संत्रास और उसके उत्पीड़न से छटपटा रहा है–

चारों तरफ चितायें जल रही हैं
सायं–सायं हवायें चल रही हैं
होते जा रहे हें राख की ढेरी
बूढ़े और जवान
बच्चे अपनी कब्रें खोद रहे है
और फिर उनमें लेट रहे हैं।[9]

उल्लेख है कि उन्होंने ''समाज–सातत्य और युग–सातत्य को करीब से पहचानने का यत्न किया है।[10] तभी तो समाज का महीयश और लधीयश दोनों रूप इनके काव्य का काव्य–विषय बन सका है। कवि समाज और काल के सत्य को अनुभूति और चिंतन दोनों स्तरों पर ग्रहण करने में समर्थ हुआ है। इसीलिए उनकी रचना में युग–सत्य शुष्क चिंतन अथवा फार्मूलाबद्ध आदश या सिद्धांत बनकर ही नहीं उभरा है, प्रत्युत् सर्वत्र कविता का रूप बनकर रूपायित हुआ है। डॉ0 प्रेम शंकर लिखते हैं कि ''भवानी प्रसाद मिश्र की कविताओं का इन्सानी सरोकार उनकी रचना का केन्द्रीय तत्व हैं जिससे उनकी जीवन–दृष्टि निर्मित हुयी है।[11] जीवन का अनुभूत सत्य ही उनके काव्य में सम–सामयिक बोध के रूप में सामने आया है। वे ही लिखते हैं जो उनकी अनुभूति का विषय है। वे मानते हैं कि ''कविता अपनी अनुभूति की अभिव्यक्ति नहीं है तो वह एक सेकेण्ड हैंड चीज होकर रह जाती है।[12] दूसरा सप्तक के वक्तव्य में उन्होंने लिखा था कि मैंने अपनी कविता में प्रायः वही लिखा है, जो मेरी ठीक पकड़ में आ गया है। दूर की कौड़ी लाने की महत्वाकांक्षा मैंने कभी नहीं की।[13] स्पष्ट है कि कवि के पास काव्य की नई चेतना, नूतन भाव बोध तथा नव्य संवेदना का स्वर जिस रूप में उनके काव्य में मिलता है, वह उनकी विशिष्ट इयत्ता का द्योतक है। अपने इसी विशिष्ट इयत्ताके कारण ही वे अधिक सप्ष्ट और आत्म–विश्वास के साथ निजी अनुभूति को लेकर काव्य में व्यक्त हुए हैं –

वाणी की दीनता
अपनी में चीन्हता
कहने में अर्थ नहीं
कहना पर व्यर्थ नहीं
मिलती है कहने में
एक तल्लीनता।[14]

समकालीन जीवन बोध को देखने सुनने और पकड़ने में कवि के व्यापक दृष्टि–फलक का भी काफी योग रहा है। चूंकि ''समकालीन कविता दायित्व बोध की कविता है और इसीलिए उसे जीवन बोध यानी आधुनिक बोध की कविता भी कहा जा सकता है। तथापि कवि की अन्यान्य रचनाओं में दाय बोध को व्यापकता का हमें सूक्ष्म परिचय मिलता है। कवि का यह दायित्व बोध मानव चेतना और विश्व संवेदना में निहित है। विश्व संवेदना तथा दृष्टि की व्यापकता के साथ–साथ जीवन को प्रबुद्ध क्रियाशील एवं सहजपन की चेष्टा भी कवि में है। दृष्ट की व्यापकता, गहन आत्मविश्वास और निजी अनभूति की पकड़ निम्न पंक्तियों में कितनी सहजता के साथ अभिव्यक्त हुयी है। देखिए –

अपने ही सपनों से
टूटे रहना
मेरा सबसे बड़ा दुख है
और सबसे बड़ा सुख है
सुन पाना
उन पांवों की आवाज
जो आते हैं
और नचाते हैं मुझे
मेरे सपनों के साथ
नारे की तरह
निर्मम होकर।[15]

कवि सामयिक बोध या समकालीन जीवन बोध को समझने के लिए बदलते हुए जीवन परिवेश के साथ संगति रखने का प्रयास करता है और शायद इसी कारण उनकी कविताओं में सामयिक बोध सहज ही एक नजर में दृष्टिगोचर होता है। उन्होंने स्वीकार किया है कि ''आज जब व्यक्ति विखर रहे हैं, व्यक्तित्व में डूबी ऐसी कविता मेरा आदर्श है, जिसके सामाजिक ध्येय और शिल्प की उदात्य सहजता व्यक्ति–व्यक्ति को अपनी लगे।[16] कवि की उक्त स्थापना की पुष्टि उनकी निम्न कविता से हो जाती है, जहां वे कहते हैं –

मैं कोई पचास–पचपन बरसोंसे
कवितायें लिखता आ रहा हूँ
अब कोई पूछे मुझसे
कि क्या मिलता है
तुम्हें ऐसा
कवितायें लिखने से
कि तुम
इस काम को
खत्म नहीं करते
बल्कि गति
अपने लिखने की
बढ़ाते चले जा रहे हो
तो, गिना सकता हूँ
सौ बातें,
लगता है मुझे
भीतर ही भीतर
कि जरूरत है दुनिया को
किसी बड़े करिश्मे की
और करिश्मा बड़ा अब
सिवा कविता के और
किसी चीज से नहीं होगा।[17]

और गीतफरोश से लेकर अंतिम कृति तक में उनकी यह मनोवृत्ति लक्षित होती है। गीतफरोश में यदि उन्होंने समाज की, देश की सम–सामयिक स्थिति पर व्यंग किया है तो गांधी पंचशती में गांधीवाद पर बल देकर आधुनिक पीड़ित जग के लिए उसकी आवश्यकता पर अपनी मान्यता प्रस्तुत की है। खुशबू के शिलालेख में वे राग–रंग से प्रभावित है तो त्रिकाल संध्या में सरकार की दमनात्मक नीति का घोर विरोध करते हुए जन–मानस में लोक कवि के रूप में प्रस्तुत हुए। धर्मयुग के संपादक ने लिखा था कि ''अनेक लोग उस समय तानाशाही को समर्पित नहीं हुए थे, छप नहीं सकते थे। लेकिन, अपने–अपने ढंग से अपने मन की निष्ठा और व्यथा को अपनी कविताओं में व्यक्त करते थे। उनकी जो कवितायें हमें उस समय उपलबध हुयी थीं, उन्हें अब प्रकाशित कर रहे हैं, कवि की यह कविता चुपचाप दिल्ली से अहमदाबाद होती हुई बम्बई पहुंची थी।[18]

तुम्हें जानना चाहिए कि हम
मिटकर फिर पैदा हो जायेंगे
हमारे गले जो घोंट दिये गये हैं
फिर से उन्हीं गीतों को गायेंगे
जिनकी भनक से तुम्हें चक्कर आ जाता है
तुम सोते में चौंक कर चिल्लाओगे
कौन गाता है?
इन गीतों को तो हमने दफना दिया था।
तुम्हें जानना चाहिए
लाशें दफनाई जाकर सड़ जाती हैं
मगर गीत मिट्टी में दबाओ तो फिर फूटते हें
खेत में दबाये गये दाने की तरह।[19]

सामान्यतः कवि जगत और जीवन के सम्बन्धों का सदैव तात्विक दृष्टि से अनुभव करते हैं और अपने काव्य संसार में वे कतिपय सम–सामयिक यथार्थ को मुखर और आशावादी स्वर प्रदान करते हैं। इस दृष्टि से उनकी कविता में युग चेतना के साथ वैचारिक सुसम्बद्धता भी देखी जा सकती है। यह भी स्मर्तव्य है कि मिश्र जी के रचना संसार में समकालीन युग–जीवन के जिन विशिष्ट रूपों का प्रतिफल अधिकाधिक हुआ है, उनमें से आधुनिकता बोध भी एक है। वे आधुनिकता को भाव बोध की ही एक प्रक्रिया और चिरंतन विकास में यथार्थवादी चितन–दृष्टि का विशिष्ट योगदान मानते हैं। आधुनिकता के सम्बन्ध में नई कविता के सृजनशील लेखकों और सुधी समीक्षकों ने महत्वपूर्ण विचार प्रकट किए हैं। श्री गिरिजा कुमार माथुर का मंतव्य है कि ''आधुनिकता परिवर्तित भावबोध की वह स्थिति है, जिसका प्रादुर्भाव यात्रिक तथा वैज्ञानिक विकास क्रम में वर्तमान बिन्दु पर आकर हुआ है। श्री लक्ष्मीकांत वर्मा की स्थापना हैकि ''आधुनिकता वास्तव में देशकाल के बोध का परिचायक है। अपनी प्रकृति में आधुनिकता मानव प्रगति द्वारा जोड़े गये जीवन के नये अर्थ और नये परिवेश की स्वीकृति है। कवि मिश्र जी आधुनिकता के मौलिक आधार के रूप में वैचारिक दृष्टि, यथार्थवादी चित्रण शैली, युग संपृक्ति और व्यक्ति का सम्मान करने वाली सामाजिकता को मानते हैं। उन्होंने इस भाव बोध की अभिव्यक्ति दो प्रकार से की है। इसमें एक ओर उन्होंने यथार्थमूलक जीवन दृष्टि आर युग–बोध के आयामों को प्रतिफलित किया है और दूसरी ओर परंपरागत रूढ़ियों ओर मान्यताओं को खंडित किया है। ''गांधीपंचशती' में उनकी कविता का जो स्वरूप प्रकट हुआ है, वह आधुनिक युगबोध के प्रखर चिंतन का परिणाम है। युग की समस्याओं को पारदर्शी बना उनकी पैनी दृष्टि जीवन–सत्यों के कठिन व कोमल परतों में धंस जातीहै। गाते–गाते जैसे कोई विचार करने लगे कवि का इस कृति में कुछ ऐसा ही स्वरूप है।[20] कहा जा सकता है कि आधुनिकता की परिधि में उन्होंने कल्पना के मोह को छोड़कर कठोर यथार्थ के आग्रह को स्वोकार किया है। यथा –

सब सहेंगे धूप, सब भोगेंगे छांव,
सुख सभी का एक, सबका शोक एक,
स्वर्ग अथवा नरक, सबका लोक एक।[21]

मिश्र जी की कविताओं को यह भाव–बोध यथार्थवादी है। इसका कारण यह है कि उनकी कविताओं का यह भावबोध युग–जीवन की वास्तविकताओ से उद्भुत है। कवि अपने चतुर्दिक वातावरण में जो कुछ देखता है या अनुभव करता है उसे अपनी तूलिका से यथातथ्य चित्रित करना चाहता है। बनी हुई रस्सी' की भूमिका (अपनी ओर से) में उन्होंने लिखा है कि ''कविता लिखते समय मेरा मन और मन ही नहीं समूचा अस्तित्व शब्दों से घ्वनित होने वाली झंकार से कांपता रहता है। वे झंकारे कभी अकेली–अकेली बजती हैं कभी समवेत होकर समुदायों में। कवि की इस आत्मोक्ति से स्पष्ट है कि उनकी कविता भव्य भवन में आराम कुर्सी पर बैठकर नहीं लिखी गयी प्रत्युत् उनके जीवनानुभव व भोगे कटु सत्य ही शब्दाकार होकर प्रकट हुए हैं। कवि ने लिखा है कि –

जहां कोई मीठा सपना
हंसता है और रोता है
अपनी कविता के
किसी एक ऐसे कोने से
सोने की दो किरनें उठा लाया मैं।[22]

कवि मन यह अनुभव करता है कि आज के समाज में मानवीय सम्बन्धों का अभाव सा हो गया है। मानवीय सम्बन्ध या मानवता का नाता नहीं के बराबर है। उसे यह अहसास होता है कि, समाज से वसुधैव कुटुम्बकम की भावना का लोप हो गया है। हमारा समाजिक जीवन विद्रूपताओं और विसंगतियों से भरा हुआ है। हम विवश और संत्रस्त स्थितियों में जीने के लिए मजबूर हैं। विचित्र विडम्बना है। परिणामतः समाज का अव्यवस्थित परिवेश और करूणा–विगलित दशा देख कवि अंतस हाहाकर कर उठता है और अंततः उसे कहना पड़ता है –

देश जाति धर्म आदर्श तो छोड़ो
बच्चों तक में करता गया हूँ कितनी बार
पचपन–छप्पन बरसों की
अपनी हार की सूची बनाऊँ
तो जितना इस क्षण
बिना सूची बनाये लजा रहा हूँ
इससे हजार गुना ज्यादा लजाऊँ।[23]

कवि के काव्य की इस सीमा रेखा में एक विशिष्टता यह रही कि उन्होंने मानवीय संवेदना की प्रेषणीयता को सहज सरल ही रखा। गहन से गहन, सूक्ष्म से सूक्ष्म और तीव्र से तीव्र आत्मानभूति को भी उन्होंने सरल तथा प्रसादयुक्त शब्दों में अभिव्यक्त किया है। सहज एंव सरल संवेदनाओं को मर्मांतक रूप से पाठकों तक पहुंचाने का उनका तरीका एकदम अपना है। यही कारण है कि वे नवीनता के आग्रही होते हुए भी प्रचीनता के विरोधी नहीं है। वे प्राचीनता का ही नये सांचे में ढालकर देखने का प्रयास करते हैं। वे अनुभव करते हैं कि आज मेरा मन नया संदर्भ है, मगर ऐसा नया भी नहीं कि उसका लगाव ही न हो किसी प्राचीनता के साथ –

संदर्भ पुराने हो सकते हैं।
नये हो सकते हैं।
यह संयोग है
कि मन मेरा
आज
एक नया संदर्भ है
मगर फिंकना तो चाहिए
पुराने ही शब्दों से
नये इस संदर्भ की चिनगारी।[24]

इस तरह कवि की काव्यात्मक संवेदना , उनकी वैचारिक चेतना उन्हें सम–सामयिकता से सम्बद्ध कर समकालीन जीवन बोध के धरातल पर प्रतिष्ठित करती है तथा रुढ़ियों के प्रति विद्रोह की भावना को आंदोलित करती है। वे आधुनिक हिन्दी साहित्य के इतिहास में विद्रोह, परिवर्तन और क्रान्ति के कवि समझे जाते है विरोध और संघर्ष को स्वीकार कर अपनी रचना धारा को नव्य–मार्ग से गतिमान करने की जैसी सामर्थ्य उनमें दिखाई देती है, वैसी हिन्दी के कवि में नही।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. दूसरा सप्तक (वक्तव्य), भवानी प्रसाद मिश्र, पृ0–7
2. भवानी भाई, कुबेरनाथ राय , पृ0–66
3. कविता के नये प्रतिमान, डॉ0 नामवर सिंह, पृ0–232
4. गीतफरोश, भवानी प्रसाद मिश्र, पृ0–181
5. गीतफरोश, भवानी प्रसाद मिश्र, पृ0–182
6. आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि : भवानी प्रसाद मिश्र, पृ0–67
7. भवानी प्रसाद मिश्र का काव्य संसार, डॉ0 कृष्णदत्त पालीवाल, पृ0–91
8. चकित है दुख, भवानी प्रसाद मिश्र, पृ0–15
9. बुनी हुई रस्सी, भवानी प्रसाद मिश्र, पृ0–118
10. भवानी प्रसाद मिश्र का काव्य संसार, डॉ0 कृष्णदत्त पालीवाल, पृ0–28
11. भवानी प्रसाद मिश्र का काव्य यात्रा (प्रवेश), डा0 प्रेम शंकर, पृ0–4
12. जिन्होने मुझे रचा, भवानी प्रसाद मिश्र, पृ0–19
13. दूसरा सप्तक (वक्तव्य), भवानी प्रसाद मिश्र, पृ0–7
14. आज के लोकप्रिय कवि वाणी की दीनता, पृ0–39
15. रविवार 10–16 मार्च 85, भवानी प्रसाद मिश्र, पृ0–37
16. आजकल, जून 1954, पृ0–46
17. रविवार, 28 फरवरी 86, पृ0–73
18. धर्मयुग, 17–23 अप्रिल 1977, पृ0–10
19. धर्मयुग, 17–23 अप्रिल 1977, पृ0–10
20. भवानी भाई, ले डॉ0 चन्द्रप्रकाश वर्मा, पृ0–135
21. नवनीत, अप्रील 1959
22. बुनी हुई रस्सी (भूमिका), भवानी प्रसाद मिश्र, पृ0–87
23. भवानी भाई , पृ0–332
24. अंधेरी कवितायें, भवानी प्रसाद मिश्र, प0–95–96